॥ जैन शासन जयकारा ॥

"पुनर्जन्म"

देवलोक से दिव्य सानिध्य :-

प.पू. गुरुदेव श्री जंबूविजयजी महाराज

प्रेरणा :-

डॉ. प्रीतमबेन सिंघवी

प्रस्तुतकर्ता :-

भूषण शाह (M.E. (I.T.), M.Phil)

प्रकाशक एवं प्राप्तिस्थान :-

मिशन जैनत्व जागरण, जंबूवृक्ष

C/504, श्री हरि अर्जन सोसायटी, चाणक्यपुरी ओवरब्रीज के पास,

घाटलोडीया, अमदावाद-**380061**

Ph. 9601529519, / 9429810625

Email - shahbhushan99@gmail.com

प्रकाशन वर्ष :- सं. **2072**, मूल्य-**20/-**

"पुष्प समर्पण"

''हृदय परिवर्तन के माध्यम से लेखन क्षेत्र में आपने मुजे **Welcome** कीया...
आज लेखन क्षेत्रमें जो भी कार्य कर पा रहा हूँ वह आपकी ही कृपा का फल है एसे परमोपकारी एवं विद्वान पं. उदयरत्नविजयजी म.सा. के करकमलो में सादर समर्पित....

-भूषण शाह

एक तोते का पुनर्जन्म

लगभग ७६ वर्ष पूर्व की बात है कि प्रसिद्ध जैन तीर्थस्थान पालीताणा में दर्शनार्थ आया हुआ एक परिवार मन्दिर के प्रांगण में कुछ देर के लिये विश्राम कर रहा था कि पुत्र-वधू ने एक पेड पर बैठे तोते के जोडे को देखकर कहा - ''अगर इनमें से एक को हम घर पर ले चले तो कितना अच्छा रहे !'' और इस कथन के ठीक एक वर्ष बाद पुत्र-वधू माँ बनी एवं एक पुत्ररत्न को जन्म दिया। बालक जब ढाई वर्ष का हुआ तो परिवार तीर्थयात्रा पर बम्बई गया, वहां वालकेश्वर के आदिनाथ मन्दिर में बालक बहुत देर तक टकटकी बांध कर मूर्ति को देखता रहा। पिता ने पूछा - ''अरे चल, कितनी देर दर्शन करेगा ?'' बालक बोला - ''मैंने ऐसी मूर्ति के दर्शन पहले भी किये हैं।'' पिता ने हँसकर कहा - ''पगला हुआ है। तूं तो पहली बार यहां आया है। दर्शन कहां से करता ?'' पर बालक सोचता रहा। संयोग की बात। एक वर्ष बाद ही परिवार पुनः पालीताणा आया और बालक ने स्पष्ट बताया कि वह यहां रहता था, पर एक तोते के रूप में और प्रतिदिन दोपहर २ बजे के बाद जब सब दर्शनार्थी चले जाते थे तो चुपचाप से मन्दिर के बन्द किवाडों के सींकचों के बीच में से अन्दर घुसकर केसर की थाली में पंजे डुबोकर मूर्ति पर केशर चढाकर दर्शन-पूजा करता था। यह मूर्ति और वालकेश्वर मन्दिर की मूर्ति एक सी है। माँ को याद आया कि उसने इसी तोते को देखकर उसे घर ले जाना चाहा था। तो यही तोता था जिसने इसी

माँ के गर्भ से बालक के रूप में १२ फरवरी, १९०९ को जन्म लिया। समय बीतता गया। आज वही बालक अपने जीवन के ८५ वर्ष पूरे कर चुका है। तोते के रूप में प्रतिदिन जिसने मूर्ति की पूजा की थी, वही मनुष्य के रूप में आकर हर घडी दरिद्र नारायणों की पूजा करता रहा है। सेवा की साधना और पूजा का भाव जन्म-जन्मान्तर से कायम रहा। इसी पुरुष का नाम है श्री सिद्धराज ढ़ड्ढ़ा।

आत्मा का अस्पताल

रोगी का नाम - सभी संसारी जीव।

बीमारी	-	दवाई
क्रोध	-	क्षमा
मान	-	नम्रता
माया	-	सरलता
लोभ	-	संतोष

हस्ताक्षर-प्रधान चिकित्सक - भगवान महावीर

पुनर्जन्म की स्मृतियां

लेखक : सिद्धराज ढ़ड्ढ़ा के पिता

स्व. श्री गुलाबचन्दजी ढ़ड्ढ़ा

लगभग ३० वर्ष पहले की बात हैं, मेरी माताजी अपने प्रपौत्र के जन्मोत्सव के लिए अनेक योजनाएँ बना रही थी। उनके मन में यह तीव्र आकांक्षा थी कि मरने के पहले वह अपने प्रपौत्र का मुंह देख ले। उस घटना के ४ वर्ष के पश्चात् उनकी आशा की किरण प्रगट हुई।

जन्म के पहले बालक का नामकरण :

पर्युषण पर्व के पवित्र सप्ताह में उन्होंने एक दिन सब परिवारजनों को एकत्रित किया और इस प्रकार सम्बोधित किया- ''तुम सब जानते हो कि मेरे मन में ४ वर्ष पहले सोने की सीढ़ी चढ़ने की जो तीव्र आकांक्षा थी, मैं सदा प्रपौत्र के जन्म के सम्बन्ध में ईश्वर से प्रार्थना करती रही हूँ और मुझे विश्वास है कि अब-चार-पांच महिनों मैं मेरी प्रार्थना सफल हो जायेगी। यदि मेरे प्रपौत्र का जन्म हो जाय तो उसके नाम के सम्बन्ध में आप लोगों का विचार जानकर मुझे प्रसन्नता होगी।''

बडे लोग इस समस्या का समाधान निकालते उसके पहले ही समूह में से एक दस वर्षीय बालिका चुपचाप निकलकर वृद्ध महिला के पास पहुंची और उसकी गोद में बैठकर मुस्कराते हुए बोली - ''अपने रिवाज के अनुसार, मेरी भाभी के होने वाले

बच्चे के जन्म के अवसर के लिए तैयार की गई सोने की सीढ़ी पर आपके चढ़ने के बाद फिर वह दान में दे दी जानी चाहिए। सम्बंधितों और मित्रों को भोजन कराना चाहिए और जाति में मिठाई बांटनी चाहिए, मन्दिरों और यात्रा के स्थानों पर भेंट चढ़ानी चाहिए और पूजा करनी चाहिए। नवजात शिशु का नाम पवित्र शत्रुंजय तीर्थ ''सिद्धाचलजी'' के नाम पर रखना चाहिए। जहां हम लोग हाल ही में यात्रा को गये थे।'' सब परिवारजन इस प्रस्ताव को सुनकर प्रसन्न हुए। मेरी माताजी ने भी इसे स्वीकार कर लिया। मैंने आदर के साथ अपनी माँ को सुझाव दिया कि उनके बाद भी उनका प्रिय नाम सदा हमारी स्मृति में ताजा रहे इसलिए ''हम सिद्धाचलजी के पहले भाग ''सिद्ध'' को पहले रखें और उसके साथ आपका नाम (माताजी का नाम राजकंवर) जोड दें। इस प्रकार जब बालक जन्म ले तो उसका नाम 'सिद्धराज कुमार' रहे।'' उन्होंने इसकी स्वीकृति दे दी। *

one picture is worth more than thousands of words.
हजारों शब्दों से एक चित्र या मूर्ति का अधिक प्रभाव पडता है

***श्री सिद्धराजजी ढड्ढा के पिता स्व. श्री गुलाबचन्दजी ढड्ढा एम.ए. ने यह लेख अंग्रेजी में लिखा था। उसी प्रामाणिक लेख का सारा यह हिन्दी अनुवाद यहां प्रस्तुत हैं।**

-सम्पादक

सिद्धराजकुमार का जन्म :

फरवरी १९०९ में सिद्धराजकुमार का जन्म हुआ। जिससे पूज्य माताजी तथा परिवार के सभी लोगों को अत्याधिक प्रसन्नता हुई। उस छोटी लड़की के द्वारा सुझाये गये सभी समाजिक रीतिरिवाज तथा खुशियां दादीजी के द्वारा पूरी की गई।

रोता हुआ बालक चुप हो गया :

बम्बई संघ की लालबाग की बैठक में सर्व-सम्मति से जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया था उसके अनुसार मैं उस समय कलकत्ता में सम्मेतशिखर के मुकद्दमे में लगा हुआ था। बालक के जन्म के शुभ समाचार पाकर मैं शीघ्र जयपुर आ गया। संभवतः जन्म के १०वें या ११वें दिन। मैंने बालक को अपनी गोद में लिया। तब अचानक ही वर जोर-जोर से रोने चिल्लाने लगा। हम लोगों ने हर सम्भव प्रयास उसे शांत करने के लिए किये, लेकिन सभी प्रयास व्यर्थ गए। बच्चा निरन्तर रोता ही रहा, और हमारी चिन्ताएँ बढ़ती गयी। अन्तिम उपाय के रूप में मेरी माँ ने एक गीत गाकर उसे चुप करने का प्रयास किया। उस समय यह गीत गया :-

''सिद्धवड रूख समोसर्या''

जैसे ही 'सिद्धवड' शब्द बालक के कानों में पहुंचा, उसने रोना बन्द कर दिया और पूरा गीत उसने बहुत ध्यान से सुना। अब बालक को चुप कराने का यह तरीका हमारे घर में मान्य कर लिया गया। जब कभी भी बालक बेचैन होता, तभी यह गीत उसे सुनाया जाता और वह हमेशा उसे ध्यान पूर्वक सुनता।

बालक की स्मृतियां १९११ में :

१९०९ से १९१४ तक के समय में मैं बम्बई रहा। जब बालक ३ वर्ष का हुआ। तभी से वह मेरे और मेरे बडे भाई साहब के साथ 'सामायिक' में बैठता था। उसने 'सामायिक' पाठ सीख लिया था। वह हमारे साथ मन्दिर आता और पूजा करता। पूजा के समय "९ अंगों के दोहे" बोलता था।

१९११ में एक दिन परिवार की महिलाओं के साथ बालक बम्बई के वालकेश्वर स्थित जैन मन्दिर में दर्शन हेतु गया। वहां की मुख्य प्रतिमा को देखकर वह आवेश के साथ बोला – "इस प्रतिमा से आदीश्वर भगवान की प्रतिमा ज्यादा बडी है।" महिलाएं इस पर बहुत चकित हुई और निम्नलिखित वार्तालाप चल पडा –

सोना – (बालक की बुआ) तुम कौन से आदीश्वर भगवान की बात करते हो ?

सिद्धा – पालीताणा के आदीश्वर भगवान की।

सोना – यह तुझे कैसे मालूम ?

सिद्ध – मैंने उस प्रतिमा की पूजा की है।

सोना – तू झूठ बोलता है। तेरे पैदा होने के बाद हम पालीताणा गये ही नहीं।

सिद्ध – मैं झूठ नहीं बोलता, सच कह रहा हूं।

सोना – यह कैसे हो सकता है।

सिद्ध – मैं कहता हूं, मैंने उस प्रतिमा की पूजा की है।

सोना – कब ?

सिद्ध – पहले वाले जन्म में।

सोना – पहले वाले जन्म में ! उस जन्म में तुम क्या थे ?

सिद्ध – मैं तोता था।

सोना – तुम कहाँ रहते थे ?

सिद्ध – 'सिद्धवड' में।

बचपन की सी बात समझकर सोना ने इस वार्तालाप को और आगे नहीं बढाया, पर उसने मुझे व मेरे भाई साहब को यह सारी घटना सुनाई। हमारे प्रश्न करने पर बालक ने वही दोहराई और उसके बाद उस पवित्र तीर्थ पर ले चलने के लिए वह हमारे पीछे पडा रहा। हमने उसे टालने के लिए कह दिया कि यात्रा में लगने वाले खर्च का प्रबन्ध होने पर चलेंगे। इस बीच वह बालक प्रतिदिन कुछ न कुछ बचाता रहा और इस प्रकार उसने कुछ रुपये इकट्ठे कर लिये। उन्हें सिद्धाचलजी में खर्च करने की दृष्टि से वह सावधानी से रखता रहा।

सिद्धाचलजी के मार्ग में, तथा बालक की परीक्षा :

१९११ की अंतिम तिमाही में मुझे दम का गम्भीर प्रकोप हुआ। मेरे डॉक्टरों ने हवा-पानी बदलने की सलाह दी। मैं प्रातःकाल ही काठियावाड फास्ट पेसेंजर से सिद्धाचलजी के मार्ग पर वढवाण के लिए रवाना हो गया। अब बालक उस पवित्र तीर्थ की यात्रा करने की सम्भावना से बहुत प्रसन्न था।

रास्ते में पालघर आता था। वहां कुछ पहाड़ियां हैं। बालक के पूर्व-कथन की सत्यता जांचने की दृष्टि से पालघर पहुंचकर मैंने बालक से कहा कि हम लोग सिद्धाचलजी आ गये, सामने की पहाड़ियां ही वह पवित्र तीर्थ है। बालक ने एकदम

उत्तर दिया – ''बीलकुल नहीं ।'' मैंने सूरत पहुंचकर वही प्रश्न फिर किया और वही उत्तर फिर मिला। रात्रि के लगभग १० बजे हम वीरमगांव पहुंचे और आगे न बढ सकने के कारण हम वहीं उतर गये तथा रात में वेटिंग रुम में ठहरे । बालक को यह कहने पर कि हम अपने गन्तव्य स्थान पर पहुंच गये हैं, उसने पुन: नकारात्मक उत्तर ही दिया।

वढवाण शिविर में और परीक्षाएं :

दूसरे दिन हम वढवाण कैम्प पहुंचे और लगभग दो महिने लीमडी की धर्मशाला में ठहरे । बालक जब भी मन्दिर में ''चैत्यवन्दन'' और भजन बोलता तो लोग चारों ओर इकट्ठे हो जाते थे। वह आने–जाने वाले साधुओं के प्रवचन भी बहुत ध्यान से सुनता था, हमारे वढवाण पहुंचने के कुछ समय बाद ऐसा हुआ कि जब एक दिन बालक मंदिर से वापस लौट रहा था तो किसी ने उसे पूछा कि तुम कहां जा रहे हो ? उसने उत्तर दिया कि मैं सिद्धाचलजी जा रहा हूं, आश्चर्य की बात यह है कि जैसी बातचीत बम्बई के वालकेश्वर मन्दिर में हुई थी वैसी ही बातचीत यहां फिर बालक और उस सज्जन के बीच हुई। वे बहुत ही प्रसन्न हुए। उन्होंने बालक को गोद में उठा लिया और घर ले आये। अब तो बालक के पूर्वजन्म की स्मृति होने के समाचार जंगल में लगी आग की तरह फैल गये और दूर–पास, सब जगह से पूछताछ होने लगी, उस डेढ महीने के समय में लगभग १५००० लोग गुजरात और काठियावाड से उसे देखने आये होंगे। कुछ वृद्ध महिलाएं तो ४०–४० मील से पैदल चलकर

उपवास करती आई और उन्होंने बच्चे को आदर देकर ही अपना उपवास तोडा–पारणा किया। साथ ही उन्होंने उसके पूर्वजन्म और उत्तर–जन्म के सम्बन्ध में प्रश्न भी किये। इस प्रकार की सैंकड़ों घटनाओं में से २–३ घटनाएं उल्लेखनीय हैं।

न्यायाधीश तथा बालक :

मौरवी रेल्वे के मजिस्ट्रेट बालक सिद्धराज से मिलने आये और उन्होंने विस्तारपूर्वक उसकी जांच और जिरह की। यह जिरह विशेष उल्लेखनीय इसलिए है कि उससे यह साबित होता है कि बालक को अपने पूर्वजन्म की याद कितनी स्पष्ट हैं। इस जन्म में सिद्धाचलजी की यात्रा किये बिना ही वह अपने पूर्वजन्म ''तोते के जीवन'' की घटनाओं को बता सकता था।

मजिस्ट्रेट – तुम पूर्व जन्म में क्या थे ?
सिद्ध – मैं तोता था।
मजिस्ट्रेट – तुम कहां रहते थे ?
सिद्ध – 'सिद्धवड' में।
मजिस्ट्रेट – यह क्या है और कहां है ?
सिद्ध – यह एक पवित्र–वृक्ष है, जो पालीताणा की छ:मील की परिक्रमा में पहाड़ के दूसरी तरफ है।
मजिस्ट्रेट – तुम वहां क्या करते थे ?
सिद्ध – मैं आदीश्वर भगवान की पूजा करता था।
मजिस्ट्रेट – तुम किससे पूजा करते थे ?
सिद्ध – केसर से।

मजिस्ट्रेट – तुम्हें केसर कहां से मिलती थी ?
सिद्ध – मरुदेवी माता के छोटे हाथी पर रखे हुए प्यालों से।
मजिस्ट्रेट – केसर की प्याली तुम किस तरह से ले जाते थे ?
सिद्ध – अपने पंजो से पकडकर।
मजिस्ट्रेट – अपनी चोंच से क्यों नहीं ?
सिद्ध – उससे तो केसर अपवित्र हो जाती।
मजिस्ट्रेट – अब मैं पूछता हूं सो बताओ, उससे तुम्हारे सच–झूठ की जांज हो जायेगी। बताओ ! वहां (सिद्धाचलजी में) कितने मंदिर हैं ? वे किस प्रकार से घिरे हुए हैं और मंदिरों में पहुंचने के कितने दरवाजे हैं ?
सिद्ध – बहुत मन्दिर हैं। वे एक चार–दीवारी से घिरे हुए हैं, उसके तीन दरवाजे हैं।
मजिस्ट्रेट – अच्छा, तुम किस दरवाजे से जाते थे ?
सिद्ध – पीछे के दरवाजे से।

मजिस्ट्रेट की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था। वह बालक को गोद में उठाकर मेरे कमरे में आया और अपने परिवार में इस प्रकार का अमूल्य–रत्न प्राप्त करने के लिये मुझे हार्दिक बधाई दी।

स्थानकवासी साध्वी और बालक :

कुछ स्थानकवासी साध्वियां बालक से मिलने आई। उनमें से एक ने बालक की जांच की।

साध्वी – तुम कहते हो कि तुम आदीश्वर भगवान की पूजा करते थे। तुम यह पूजा किससे करते थे ?
सिद्ध – मैं केसर और फूलों से पूजा करता था।

साध्वी – तुम्हें ये कैसे मिलते थे ?
सिद्ध – (केसर की उपरोक्त कथा दोहराने के बाद) – सिद्धवड के पास वाले बगीचे से मैं फूल लाता था।
साध्वी – क्या केसर और फूलों से मूर्ति की पूजा करना पाप नहीं था ?
सिद्ध – अगर पाप होता तो मैं तोते की योनि में से मानव की योनि में कैसे जन्म पा सकता था ?

इस जवाब को सुनकर वह साध्वी एकदम चुप गो गई। सभी साध्वियां बालक सराहना करती हुई वहां से चली गई।

चमेली के फूल की पहचान :

बिमारी से मुक्त होने के बाद विशेष पूजा के लिए पालीताना से मैंने गुलाब और चमेली के फूल मंगवाये थे। पार्सल खोलने पर बालक ने चमेली का एक फूल उठा लिया और बोला – ''मैं आदीश्वर भगवान की ऐसे फूलों से पूजा करता था।''

सिद्धाचल की पहचान :

सन् १९१२ के जनवरी मास में रात की गाडी से वढ़वाण से हम पालीताना के लिए रवाना हुए। प्रातःकाल सोनगढ पहुंचे। चारों ओर की पहाडियों को देखते ही बालक ने उत्साह से कहा कि – ''अब हम उस पवित्र पहाड के आसपास हैं।'' सीहोर स्टेशन पर पालीताना के लिए गाडी बदलने के समय बालक प्लेटफोर्म पर खडा हो गया और उस पवित्र पर्वत की दिशा में मुडकर अत्यन्त आनन्द के साथ उसने वंदना की। फिर मेरी तरफ मुडकर वह अत्यन्त आनन्दपूर्ण मन से बोला – ''देखिये, देखिये

काका साहब ! जल्दी करिए, हम तुरन्त पहाड पर चलें।''

पहाड के नीचे :

बाबू माधोलाल की धर्मशाला में ठहरने का इन्तजाम करके हम लोग शाम को पहाडी के नीचे पहुंचे। जब हम लोगों ने रिवाज के मुताबिक वंदन किया तो बालक ने पहले स्तुति की और फिर जमीन पर लेटकर पूरा दण्डवत् किया, उसने इस पवित्र भूमि का बहुत प्रेम से आलिंगन किया, लगता था जैसे बालक मुग्ध हो गया हो। वह तलहटी के एक सिरे से दूसरे सिरे तक लगभग १५ बार लोटा होगा। उसने उस समय पहाड पर जाने के लिए अत्यन्त उत्साहपूर्वक हम लोगों से कहा। पर बाद में मेरे समझाने पर दूसरे दिन प्रात:काल पहाडी पर जाने के लिए वह राजी हो गया।

तीन मील के बजाय तीन सीढियाँ :

जब हम लोग प्रात:काल ४ बजे यात्रा के लिए उठे तो बालक पहले से ही जाग रहा था। तलहटी में पूजा-प्रार्थना के पश्चात् कमजोरी के कारण मैंने पहाड पर आने-जाने के लिए 'डोली' किराये पर ली थी। मैं बच्चे को अपने साथ डोली में बैठाकर ले जाना चाहता था, उसने मेरे साथ डोली में बेठने से इन्कार कर दिया और पर्वत के शिखर की तरफ निगाह फैलाते हुए कहा, ''आप यहां से चोटी तक कितनी दूरी समझते हैं ?'' मैंने कहा, ''लगभग तीन मील।'' उसने प्रफुल्लता से कहा – ''यह तो केवल सीढ़ियों की तीन कतारें ही हैं, तीन मील नहीं। मैं पहाड पर पैदल जाऊँगा। आप भी पैदल चलें'' ऐसा कहकर बिना मेरा इन्तजार किये मुझे पीछे छोड़कर उसने मेरे भाई की अंगुली पकड ली और खुशी-खुशी पहाड़ की ओर पैदल चल पडा।

बिना रुके चढ़ाई :

मेरे भाई ने मुझे बताया कि पूरे रास्ते बालक सम्मोहन जैसी अवस्था में पर्वत के शिखर की ओर तेजी से बढ़ता गया। उसे उबड-खाबड जमीन का कोई ध्यान ही नहीं था। आमतौर पर छोटी उम्र के बालक इस मौके के लिए किराये पर तय किये हुए कुलियों के कंधों पर ले जाये जाते हैं। कुली मेरे भाई के पास आये और उन्होंने कंधे पर बच्चे को न ले जाने के सम्बन्ध में उनकी बेरहमी और दयाहीनता की निंदा की। कुछ कुलियों ने बिना पैसे लिए ही बच्चे को ले जाने को कहा। जब इस प्रकार की फटकारें असह्य हो गई तो मेरे भाई ने कुलियों से कहा कि अगर तुममें से कोई भी बालक को कंधे पर चढ़ाने के लिए राजी कर लें तो मैं दुगुना किराया दूंगा। कुछ कुलियों ने बालक के पास पहुंचने का प्रयत्न किया। लेकिन बालक ने घृणापूर्वक उनका स्पर्श करने से इन्कार कर दिया। यही नहीं, उसने उन्हें पहाड पर जाने में विघ्न डालने के बारे में बुरा-भला भी कहा। इस प्रकार का बर्ताव पहले दिन ही हुआ, उसके बाद तो वे कुली भी समझ गये कि यह बालक पदयात्रा ही करना चाहता हैं। तत्पश्चात् सब लोग बालक को आदर और सराहना की निगाह से देखने लगे। वे उसके लिए रास्ता छोड़ देते थे और उसके साहस, उसकी आश्चर्यजनक शक्ति और धीरज के लिए उसे आशीर्वाद देते थे।

चढ़ाई के मध्य में एक स्थान बहुत सीधी चढ़ाई का है और सभी यात्री 'हिंगलाज का हडा' नामक इस स्थान पर कुछ समय के लिए आराम करते हैं। मेरे भाई तथा परिवार के अन्य सदस्य आगे बढने के पहले थोडा आराम करना चाहते थे। लेकिन

वह बालक तो ऊपर पहुंचने के लिए उतावला था। उसने उन्हें क्षणभर रुकने का भी मौका नहीं दिया और सीधा ऊपर ले गया। वे सब मेरे वहां पहुंचने से पन्द्रह मिनट पहले ही 'रामपोल' पहुंच गये। मेरे भाई ने मुझसे कहा कि इस बालक में आदीश्वर भगवान के दर्शन करने और पूजा करने की इच्छा इतनी तीव्र है कि वह सारे समय चलने के बजाय दौड़ता ही रहा है।

पूजा के पांच स्थान और तीन परिक्रमायें :

आमतौर पर यात्री पांच स्थानों की पूजा करके और मुख्य मंदिर की तीन परिक्रमायें देकर बाद में मूलनायक भगवान के दर्शन करते हैं।

(१) शान्तिनाथ का मन्दिर (२) नया आदीश्वर मन्दिर
(३) आदीश्वर चरण-छतरी (४) सीमंधर स्वामी का मन्दिर
(५) पुंडरीक स्वामी का मन्दिर

जब हम लोग क्रमशः इन स्थानों पर पूजा करने गये तो बालक ने कहा कि उसने पहले तीन मन्दिरों में तो पहले भी पूजा की थी, अन्तिम दो में नहीं की थी।

मुख्य मंदिर में बालक के पूजाभाव :

मुख्य मन्दिर के चौक में घुसने के बाद जब सीढियां चढकर हम ऊपर के चौक में पहुंचे तो बालक ने तुरन्त अत्यन्त उत्साह के साथ 'मूलनायक' की ओर संकेत करके कहा कि इन्हीं आदीश्वर भगवान की उसने पूर्वजन्म में पूजा की थी। मन्दिर के मुख्य मण्डप में पहुंचकर उसे बहुत प्रसन्नता हुई। बालक के साथ हम लोगों ने पूजा की, उसके बाद बालक मूर्तिवत् 'कायोत्सर्ग'

ध्यान में खड़ा हो गया। उसकी खुली हुई आंखें बिना पलक झपके आदीश्वर भगवान पर स्थिर थी, वह इस ध्यानमुद्रा में अपने-आपको भूल गया। मन्दिर में जो कुछ हो रहा था उसे भी भूल गया, सैंकडों यात्रियों के शोर-शराबे और पूजा-संगीत के गुंजन को लगभग आधे घंटे तक वह भूलाये रहा। अनेक साधु, साध्वियां, गृहस्थ स्त्री-पुरुष इस छोटे बालक के 'दर्शन और ध्यान' को देखकर चकित हो गये। लगभग आधे घंटे तक के अनवरत मुग्ध 'ध्यान' के पश्चात् मैंने उसके कंधे थपथपाये तब वह चौक कर होश में आया। ध्यान में जो स्वर्गीय आनन्द उसे प्राप्त हुआ उसका वर्णन करना उसके सामर्थ्य के बाहर था। शांत-मूर्ति मुनि कपूरविजयजी बालक के पास बैठे हुए बराबर उसकी तरफ देख रहे थे। उन्होंने बाल की उच्च ध्यानावस्था पर अनावश्यक विघ्न डालने के मेरे कार्य को ठीक नहीं माना।

सङ्गमरमर का छोटा हाथी :

४-५ पुजारियों में से एक बूढे चौबदार को बालक पहचान गया और उसकी तरफ इशारा करके बोला कि - ''यही सदा केसर की प्याली उस छोटे से संगमरमर के हाथी पर रखता था, यहां से वह घुटी हुई केसर मैं अपने पंजों में उठाता था और आदीश्वर भगवान की पूजा करता था।'' बालक उस छोटे हाथी के पास हमें ले गया जो बडे हाथी के दाहिनी तरफ था, और इसलिए जो यात्री बाई तरफ पूजा के लिए बैठते थे उनकी निगाहों से वह हाथी छिपा रहता था। मैंने भी पहले इस हाथी को नहीं देखा था।

आदीश्वर भगवान की प्रथम पूजा :

बालक के अद्‌भुत तथा आनन्दपूर्ण भावों को अभिव्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। उस समय जो प्रेरणा उसमें उत्पन्न हुई वह मेरी समझ के बाहर थी। ऐसा दिखता था कि वह सबका स्वामी हो। उसके भाव उस समय एक ऐसे योद्धा के भाव से मिलते-जुलते थे जिसने किसी प्रबल शत्रु को हराने के बाद हारे हुए शत्रु की राजधानी में विजयोत्सव मनाते हुये प्रवेश किया हो। फिर बालक का ध्यान प्रथम पूजा की तरफ गया। वहां के प्रचलित रिवाज के अनुसार सबसे ऊंची बोली लेकर मैंने दूध, फल, केसर, फूल, मुकुट और आरती की पहली पूजाएं प्राप्त की। भक्तिभाव से बालक भी अपनी बचत राशि से तुरंत फुरती से जाकर बहुत सारे फूल और मालाएं खरीद कर लाया। उसने एक के बाद एक ये सब पूजाएं बहुत ध्यान तथा भक्ति से की। उसे इस बात की प्रसन्नता थी कि पक्षी से मनुष्य योनि पाने के बाद पुनः अपने भगवान की पूजा करने का महान सौभाग्य उसे प्राप्त हुआ था।

बालक का व्रत:

बालक अपने ३१ दिन के यात्रा काल में प्रतिदिन पर्वत पर आदिश्वर भगवान की पूजा किये बिना अन्न-जल ग्रहण नहीं करता था। अपने व्रत को दृढता के लिए वह मुनि कपूरविजयजी की मन्दिर में आने की प्रतीक्षा करता था। उनके आने पर वह उनके पास जाकर उनकी वंदना करता तथा दोपहर के पहले अन्न-जल ग्रहण न करने के अपने दैनिक व्रत को दुहराकर पक्का कर लेता।

बालक की परीक्षा :

१२-३० बजे पूजा समाप्त करने के बाद हम नीचे उतरने की

तैयारी कर रहे थे। बालक की जांच करने के लिए मैंने उसे कुछ खाना खा लेने के लिए कहा (यद्यपि मैं उसके लिए कोई भोजन नहीं लाया था।) बालक ने मेरी तरफ देखा और विनोद में उसने पूछा, ''क्या आपको भूख लगी है ? काका साहब ! मुझे लगता है कि आदीश्वर भगवान की पूजा के बाद आपको भूख लग आई। मुझे तो भूख नहीं लगी है। मेरा पेट तो इस बात से ही भर गया है कि अपने एक जन्म में इतनी जल्दी आदीश्वर भगवान की मैं पूजा कर सका।'' मैंने बातचीत का रूख बदल दिया और कहा-मेरे साथ डोली में चलो लोकिन वह पैदल चलने के व्रत पर अडिग था। आचार्य (तब मुनि) अजितसागरजी ने बालक को मेरे साथ डोली में चले जाने के लिए राजी करना चाहा। पर वह राजी नहीं हुआ और पैदल ही पहाड से उतरा। रास्ते में अनेक लोगों ने उससे पानी पीने को कहा, पर उसने इन्कार कर दिया। बल्कि उसने यात्रियों को झिडका और कहा कि इस पवित्र पर्वत पर खाने का व पानी पीने का रिवाज बिल्कुल छोड देना चाहिए। उसने दोपहर के बाद ढ़ाई बजे धर्मशाला में पहुंच कर हि भोजन किया।

हजारों यात्री बालक से मिले :

वढवाण की भांति पालीताना में भी बालक से प्रतिदिन मिलने के लिए बडी संख्या में यात्री आते थे और बालक की वह कडी परीक्षा संध्या को देर तक चलती थी। सेठ गिरधर भाई आनन्दजी, भावनगर के सेठ अमरचन्द घेलाभाई तथा अन्य कई लोग बालक से अनेक प्रश्न करते थे और उन्हें संतोष जनक उत्तर प्राप्त होता था।

बालक का वृत्तांत :

पालीताना के यात्रियों ने सिद्धवड में उसका घोंसला

देखने पर जोर दिया। तब एक दिन निश्चित किया गया और लगभग एक हजार यात्री बालक के पीछे हो लिये। उसने उन्हें वृक्ष की वह शाखा दिखाई जहां तोते का घोंसला था जिसे देखंकर सब लोग बहुत संतुष्ट हुए।

पालीताना में ३१ दिन का निवास :

पालीताना की ३१ दिन की यात्रा में इस ४ वर्ष के बालक ने प्रतिदिन पैदल यात्रा की। इस प्रकार पहाड पर चढने-उतरने में लगभग ८ मील का फासला तय करना पड़ता था, वह बिना अन्न-जल ग्रहण किये पहाड पर चढ़ता था और तीसरे पहर पहाड से उतर कर ही भोजन करता था, वह प्रतिदिन अत्यन्त निर्मल चित्त से ध्यानस्थ होकर पूजा करता था।

मुनि श्री हंसविजयजी का निर्णय :

मुनि श्री हंसविजयजी की राय थी कि बालक को जाति-स्मरण ज्ञान उस समय हुआ जब मैंने (गुलाबचन्दजी ढड्ढा ने) बालक को गोद में लिया था और उसे सिद्धाचलजी का भजन सुनाया था और उसकी स्मृति तब जागृत हुई जब उसने वालकेश्वर मन्दिर की प्रतिमा के दर्शन किये।

मुनि श्री कपूरविजयजी का निर्णय:

मुनि श्री कपूरविजयजी ने भी कहा कि बालक को जन्म के १०वें दिन हीं जाति-स्मरण हो गया था, जब उसे रोते समय सिद्धाचल का भजन सुनाया गया। मात्र १० दिन का होने के कारण उस समय वह अपने विचार प्रगट नहीं कर सकता था किन्तु जब वालकेश्वर के मन्दिर की मूर्ति में उसने आदीश्वर भगवान की पूर्व जन्म से समानता देखी तो उसे अपने उदगार व्यक्त करने का सुअवसर मिल गया।

अभिनन्दन प्रसंग - एक उडती नजर

लेखक : राज. गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष

वरिष्ठ रचनात्मक कार्यकर्त्ता, लेखक और पत्रकार-श्री पूर्णचंद्र जैन

卐

बहुत से व्यक्तियों को शायद यह मालूम नहीं होगा कि भाई ढड्ढाजी बचपन में लगभग ३ वर्ष के थे तब, 'जाति-स्मरण ज्ञानधारी' थे। इस रहस्य की खोज-जांच की गई तो वैसा प्रमाणित हुआ था, सिद्ध हुआ था, वे कहते थे कि पूर्व जन्म में वे पालीताना तीर्थ में एक वृक्ष-कोटर में रहने वाले तोता थे। उनके बार-बार ऐसा कहते, वही रट लगातार लगाते देखकर, ढड्ढा परिवार के बुजुर्ग उच्च अंग्रेजी-शिक्षा प्राप्त और समाज-सेवा प्रिय, धर्मानुरागी, बाबा साहब श्री गुलाबचन्दजी ढड्ढा, साधु-सन्तों से सलाहकर, परिवार सहित बालक सिद्धराज को उसके इंगितानुसार पालीताना तीर्थ पर ले गये थे। वहां लोगों से बातचीत करने और निर्दिष्ट वृक्ष तथा आस-पास के स्थान को देखने से बालक ढड्ढा के तोता होने की बात एक तरह से सिद्ध हुई थी। मानव और पशु-पक्षी, मानवेतर प्राणी का परस्पर सम्बन्ध एक से अधिक जन्मों में होना भी प्रामाण्य बनता था। बालक के पूर्व जन्म सम्बन्धी जाति स्मरण ज्ञान की बात सिद्ध हुई-इसी से नाम "सिद्धराज" पडा होगा। कालान्तर में बालक ढड्ढा का भविष्य जिस तरह ऊंचा और उज्ज्वल होता गया वह घटनाक्रम भी "पूत्र के लक्षण पालने" की किंवदन्ती को प्रत्यक्ष चरितार्थ करता है।

याद नहीं आता कि कब, कहां, किस प्रसंग में भाई श्री

ढड्ढाजी से प्रथम मिलन हुआ। लेकिन पहली मुलाकात में ही कुछ वह हुआ जो निकटता बढाता गया। श्री ढड्ढाजी उम्र में मुझ से बडे होने से एक साथ हम पढे तो नहीं, न एक ही शाला, पाठशाला में पढने बैठे। बाबा साहब श्री गुलाबचन्दजी ढड्ढा से सम्पर्क जरुर पहले हुआ। उनके व्यक्तित्व, सौम्य-स्वभाव, प्रेमाल प्रोत्साहनकारी व्यवहार, तत्कालीन आभिजात्यवर्ग की वेशभूषा, विद्वत्ता, भाषण-सम्भाषण की प्रभावी शैली की मेरे छोटे विद्यार्थी मानस पर एक छाप पडी थी। सामाजिक पंचायत की बैठकों में अपने पिताश्री या बडे भाई साहब के साथ दर्शक के रूप में मैं कभी-कभी चला जाता था, वहां बाबा साहब के प्रस्तुत जाति-समाजगत प्रश्नों पर तर्क पूर्ण विवेचन और समन्वय मूलक फैसले काफी बोधक लगते थे। नवयुवक मंडल जैसी जोशीली सुधारक संस्था द्वारा आयोजित उत्सव, समारोह आदि में विशेष अवसर पर बाबा साहब की सशक्त अभिव्यक्ति कई बार अच्छी लगती थी। नवयुवक मण्डल या अन्य संस्था द्वारा आयोजित भा,ण, लेखन प्रतियोगिता में आशीर्वाद के साथ पुरस्कार बाबा साहब के हाथों मिला। ऐसे प्रसंगों पर बाबा साहब ने कई बार, कई तरह से प्रभावित किया। स्वाभाविक ही उनके प्रति मेरा आकर्षण बढा था, किसी समारोह या अवसर-विशेष पर बाबा साहब के साथ 'भाई साहब' (श्री सिद्धराजजी) रहे होंगे तो उनके प्रति भी मेरा आकर्षण और उनसे मिलने का विचार बना होगा। बहरहाल भाई ढड्ढाजी से 'पहली मुलाकात' की याद नहीं आती। किन्तु वह जब भी और जितनी-सी अवधि की हुई हो, नजरें ही मिली हों, वह ऐसी हुई कि एक अन्य हमउम्र मित्र

(जिनका जिक्र आगे करूंगा) के साथ हम (उस समय बालक या तरुण और अब बुजुर्गो के नजदीक पहुंचे) 'ईन-मीन-साढे-तीन' व्यक्तियों की स्वच्छ सौहार्दपूर्ण मित्रता प्रगाड होती गई हैं और इस पर हमें नाज हैं।

नास्तिक और द्रव्य पूजा में अविश्वास करने वालों के लिए इससे बडा जीता जागता उदाहरण ौर क्या मिल सकता हैं कि पुष्प पूजा के प्रभाव से तिर्यंच योनि से तोता को महामूल्यवान मानव भव प्राप्त हुआ है।

तथा उस जमाने के जयपुर के दिवान गुलाबचन्दजी ढड्ढा के सुपुत्र हुए। उस युग में उनके परिवार को पांव में सोना पहनने की राज्य से छूट मिली हुई थी। उन दिनों हर कोई व्यक्ति कानूनन पांव में सोना नहीं पहन सकता था।

ऐसे अटूट सम्पत्ति का मालिक एक तोता बिना पुण्य से बन सकता है क्या ? नहीं ! यह भी कहा गया है - प्रभु पूजा से आठों प्रकार के कर्मो का नाश होता है तथा धन, सुख, स्वर्ग तो ठीक क्रम म्से मोक्ष सुख तक प्राप्त होता है।

जरा जाव न पीडेइ, वाही जाव न वड्ढई।
जाव इंदिया न हायंति, ताव धम्मं समायरे ॥

-दशावैकालिक सूत्र

भावार्थ :- बुढापा आने के पहले - जवानी में, बीमारी बढने के पहले-तन्दुरुस्ति में तथा जब तक इंद्रियां सशक्त और सलामत हैं धर्म कर लेना चाहिये।

मूर्तिपूजा जैन आगमों में

- श्री ठाणांग सूत्र के ठाणा में नन्दीश्वरद्वीप के ५२ जिन-मन्दिरों का अधिकार है। पंडीतजी संप्रदाय के चंपालालजी म. भी यह मानते हैं।
- श्री समवायांग सूत्र के सत्तरहवें समवाय में जंघाचारण विद्याचारण मुनिओं के तीर्थ यात्रा वर्णन का उल्लेख हैं।
- भगवती सूत्र शतक ३ के चमरेन्द्र उद्देशा के अधिकार में जिनप्रतिमा का शरणा कहा हैं।
- श्री उपासकदशांग सूत्र में आनन्द श्रावक के अधिकार में जिनमूर्ति का उल्लेख हैं।
- रायपसेणीय सूत्र में सूर्याभदेव ने जिनप्रतिमा की पूजा की थी। उसका वर्णन हैं।
- द्रौपदी जिन प्रतिमा की पूजा करती थी। उसका ज्ञाता-धर्मसूत्र में विशद वर्णन हैं।
- विजयदेव ने जिन प्रतिमा की पूजा की, इसका जीवाभिगम सूत्र में विशद वर्णन हैं।
- शत्रुंजय तीर्थ पर कई आत्माएं मोक्ष में गई। इसका अंतकृत् सूत्र में वर्णन हैं।
- अष्टापद तीर्थ पर ऋषभदेवजी के पुत्र भरत चक्रवर्ती ने २४ तीर्थंकरों का मन्दिर बनाया है। वहां जिन प्रतिमाओं के आगे रावण ने वीणा बजाकर भक्ति करके तीर्थंकर गोत्र बांधा हैं। ऐसे तो वर्तमान के कई उदाहरण है जो पढकर सुनकर आपका दिल दिमाग दुरुस्त हो जावेगा।

अब मिल गया दिव्य प्रकाश

- केसरीयाजी (धुलेवा) की मूर्ति ११ लाख वर्ष पुरानी हैं।
- नांदीया, क्षत्रीयकुंड दीयाणाजी व बामणवाड़जी (जिला-सिरोही) तीर्थ में महावीरस्वामी की मूर्ति, प्रभु के बडे भाई नन्दीवर्धन ने बनवाई थी, उसे २५५० वर्ष हुए हैं।
- आबू-देलवाडा में १८ करोड की लागत से विश्वविख्यात जैन मन्दिर बनवाने वाले विमल मन्त्री ने दो हजार जिन-प्रतिमाएं बनवाई थीं। इसे १०५० वर्ष हुए हैं।
- गिरनार के नेमिनाथ प्रभु व जिला-मेहसाणा में हारीज के पास शंखेश्वर तीर्थ में पार्श्वप्रभु की प्रतिमा करोडों (असंख्य) वर्ष पुरानी हैं।
- राजा कुमारपाल ने तारंगा तीर्थ (जिला-मेसाणा) में अजितनाथ भगवान का विशाल मन्दिर व अन्य पांच हजार मन्दिर तथा सात हजार जिन प्रतिमाएं बनवाई थीं। इसे ९०० वर्ष हुए हैं।
- देलवाडा (जिला-उदयपुर) के जैन मन्दिर आठ सो वर्ष पहिले बने थे।
- पालीताणा तीर्थ के सैंकडों जैन मन्दिर व गिरनार, सम्मेतशिखर, पावापुरी आदि तीर्थ जैन धर्म में मूर्ति पूजा की मान्यता व प्राचीनता के बोलते इतिहास हैं।
- ओसवालों के आद्य संस्थापक रत्नप्रभसूरीश्वरजी म.सा. २४५० वर्ष पूर्व हुए जिन्होंने ३४५००० को जैन बनाया व आप लोग वहां से बाहर निकले ओसवाल कहलाएं।

सभी सचाने एक मत

- भगवती सूत्र के प्रारम्भ में ''णमो बंभीए लिवीए'' ऐसा कहकर सुधर्मास्वामी गणधर ने श्रुतज्ञान की स्थापना (मूर्ति) को नमस्कार किया है।
- केलवा की अंधारी ओरी में तेरापंथी आचार्य भारमलजी स्वामी की काष्ठ की खडी मूर्ति हैं।
- तुलसी साधना शिखर के प्रांगण में आचार्य श्री भारमलजी स्वामी की पाषाणमय चरण पादुकाएँ स्थापित हैं।
- रुण (जिला-नागौर) में स्व. युवाचार्य मिश्रीमलजी म. मधुकर की प्रेरणा से बनी हुई स्व. हजारीमलजी म. की संगमरमर की बडी मूर्ति है।
- जैतारण के पास गिरिगांव में स्थानक के गोखडे में स्था. मुनि श्री हर्षचन्द्रजी म. की मूर्ति है।
- जसोल (जिला-नागौर) में तेरापंथी संत स्व. जीवणमलजी स्वामी की संगमरमर की मूर्ति है।

जिंदा रहने के लिए प्राणवायु (ओक्सीझन) की करह धर्म में मूर्तिपूजा की आवश्यकता व प्राचीनता को सभी ने स्वीकार किया है।

- तीर्थंकर मुहपत्ति नहीं बांधते थे। -समवायांग सूत्र
- गौतम स्वामी मुहपत्ति नहीं बांधते थे। -विपाक सूत्रे-दुःख विपाक
- विक्रम सं.१७०८ में लवजी स्वामी ने मुहपत्ति बांधने की नई प्रथा चलाई है।

जिनके दर्शन से मिटे, जन्म-जन्म के पाप,
जिनके पूजन से कटे, भव-भव के संताप,
एसे श्री जिनराज को, वन्दो बारम्बार।

युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी ने कहा -

''मैं तो हंमेशा जाता हूं मन्दिरों मे। अनेक स्थलों पर प्रवचन भी किया है। आज भीनमाल में श्री पार्श्वनाथ मंदिर में गया। स्तुति गाई। बहुत आनंद आया।''

-जैन भारती पृष्ठ २३ वर्ष ३१ अंक १६-१७, दि. २०-७-८३ तेरापंथ अंक

आपको भी जैन मंदिरों में प्रतिदिन दर्शन-पूजन करके आनंद लेना चाहिए।